222hi09

9

विकास की प्रकृति और इसके निर्धारक

सभी जीवित प्राणियों के अभिलक्षणों में से एक अत्यन्त महत्त्वपूर्ण अभिलक्षण है 'परिवर्तन'। गर्भ धारण से लेकर मृत्यु की जीवनावधि के सम्पूर्ण विस्तार में मानव जीवन में हुये परिवर्तनों पर यदि हम दृष्टि डालें, तो यह परिवर्तन अत्यन्त आश्चर्यजनक प्रतीत होते हैं। अजन्मे शिशु से लेकर वयस्क होने तक और तत्पश्चात् वृद्धावस्था तक की मानव–यात्रा बहुत ही रोचक है। यहाँ तक कि अपने चहुँ ओर के मानवीय जीवन पर सामान्य दृष्टि डालने से ही आप स्पष्टतया यह जान जायेंगे कि हमारे शरीरों और मनोवैज्ञानिक क्रियाकलापों में प्रतिदिन अनेक परिवर्तन होते रहते हैं। कुछ परिवर्तन सुस्पष्ट होते हैं जबकि कुछ परिवर्तनों को तत्काल अथवा सुस्पष्ट रूप से देख पाना संभव नहीं होता। इनमें से कुछ परिवर्तनों का निर्धारण अधिकांशतः आनुवंशिकी द्वारा अथवा जेनेटिक घटकों द्वारा अधिक होता है, जबकि कुछ परिवर्तन अधिकतर परिवेशीय और सांस्कृतिक घटकों पर आधारित होते हैं। विभिन्न संस्कृतियों के विकास के लिए विभिन्न लक्ष्य रखती हैं और वे अपने बच्चों के पालन–पोषण में विभिन्न रणनीतियों का प्रयोग करती हैं। व्यक्तियों के सर्वोत्तम संभावित विकास में सहायता के लिए, सम्पूर्ण जीवनावधि के दौरान विकास की प्रकृति और प्रक्रिया को समझना बहुत महत्वपूर्ण है।

उद्देश्य

इस पाठ का अध्ययन के पश्चात आप :

- विकास की प्रकृति का वर्णन कर सकेंगे और अन्य संबद्ध संकल्पनाओं से इसका अंतर स्पष्ट कर सकेंगे;
- मानव विकास के महत्त्वपूर्ण प्रभाव–क्षेत्रों और चरणों का वर्णन कर पायेंगे;
- मानव विकास पर पड़ने वाले मुख्य जेनेटिक और परिवेशीय प्रभावों को पहचान सकेंगे, और
- जन्म–पूर्व के साथ–साथ जन्मोपरान्त परिवेशीय घटकों के विकास पर पड़ने वाले प्रभावों के बारे जान सकेंगे।

9.1 विकास की प्रकृति

इस भाग में हम ''विकास'' शब्द का अर्थ समझने, अन्य संबद्ध संकल्पनाओं से इसका अन्तर स्पष्ट करने और इसके प्रमुख अभिलक्षणों को समझने का प्रयास करेंगे।

क) ''विकास'' की संकल्पना

''विकास'' शब्द का प्रयोग प्रायः उस गतिक प्रक्रिया को प्रतिरूपित करने के लिए किया जाता है जिसके द्वारा कोई व्यक्ति बढ़ता है और अपने सम्पूर्ण जीवन–काल में परिवर्तित होता रहता है। साधारणतया हम सोचते हैं कि यह गुणात्मक परिवर्तन की वह प्रक्रिया है जो गर्भ–धारण से लेकर मृत्यु–पर्यन्त निरंतर होती रहती है। इस प्रकार विकास एक व्यापक शब्द है और उन सभी क्षेत्रों से संबद्ध है जिनमें भौतिक, गतिक, संज्ञानात्मक, दैहिक, सामाजिक, संवेगात्मक और व्यक्तित्व संबंधी क्षेत्र समाहित हैं। उल्लेखनीय है कि इन सभी क्षेत्रों में हुये विकास परस्पर संबंधित हैं। उदाहरणतया, एक 13 वर्षीय लड़की के शरीर में शारीरिक और जैविक परिवर्तन होते हैं और इन परिवर्तनों, के साथ ही उसके मानसिक, सामाजिक और संवेगात्मक विकास से भी संबंधित होते हैं।

जीवन का प्रारंभः गर्भधारण के उस क्षण से होता है जब माता के अण्डाणु का पिता के शुक्राणु के साथ निषेचन होता है और एक नये मानव जीव का सृजन होता है। उस क्षण से लेकर मृत्यु पर्यन्त व्यक्ति में निरन्तर परिवर्तन होते रहते हैं। यह परिवर्तन अचानक नहीं होते अपितु नियमित और प्रायः एक पैटर्न के अनुरूप होते हैं। यहाँ यह भी उल्लेखनीय है कि विकासात्मक परिवर्तन सदैव वृद्धि संबंधी अथवा विकासमूलक नहीं होते। इनमें क्रियात्मकता में कमी आना भी सन्निहित है जिसे ''अन्तर्वलयन'' (इन्वॉल्यूशन'') कहते हैं। एक बच्चा विकास की प्रक्रिया में अपने दूध के दांत खो देता है, जबकि एक वृद्ध व्यक्ति की स्मृति और शारीरिक क्रियात्मकता में कमी देखने में आती है। इसलिए हम कह सकते हैं कि सबसे अच्छा यही है कि विकास को हम पाने–खोने की प्रक्रिया के रूप में समझें जिसमें नये–नये और विभिन्न प्रकार के परिवर्तन घटित होते रहते हैं। पुराने व्यवहार पैटर्नों में उनकी विशिष्टता (प्रभावोत्पादकता), समाप्त भी हो सकती है, जबकि नये परिवर्तन उभर सकते हैं।

संस्कृति के संदर्भ में विकासः प्रकृति और पालन–पोषण दोनों के संयुक्त प्रभाव से ही विकास आकार लेता है। प्रकृति, बच्चे में उस आनुवंशिक योगदान की ओर संकेत करती है, जो उसे गर्भ धारण के समय अपने माता–पिता से प्राप्त होता है। जेनेटिक्स व्यक्ति के शारीरिक ढांचे और क्रियात्मकता के कुछ पक्षों को निर्धारित करने के साथ–साथ कुछ सीमा तक मनोवैज्ञानिक अभिलक्षणों को भी निर्धारित करता है। पालन–पोषण उन जटिल शारीरिक और सामाजिक परिवेश के प्रभावों की ओर इंगित करता है जिसमें हम विकसित और बड़े होते हैं। बालक के परिवेश के विविध पक्ष, (जैसे भौतिक सुविधाएँ, सामाजिक संस्थायें और धार्मिक अनुष्ठान, और स्कूल) विकासात्मक परिणामों पर बहुत ही महत्वपूर्ण तरीके से प्रभाव डालते हैं।

ख) मूल विकासात्मक संकल्पनाएं

''विकास'' को हम **''वृद्धि'' (''ग्रोथ'')** और **''परिपक्वता'' (''मैच्योरेशन'')** के साथ परस्पर परिवर्तनीय शब्द के रूप में प्रयोग करते हैं, परन्तु इन शब्दों में बहुत ही सावधानीपूर्वक विभेद की आवश्यकता है।

''वृद्धि'' (''ग्रोथ'') शब्द का अर्थ प्रायः जैविक ढांचे में हुये मात्रात्मक जुड़ाव अथवा परिवर्तनों के लिये दिया जाता है। उदाहरणतया जैसे–जैसे हम बड़े होते हैं, शरीर का आकार, कद, वजन, हमारे शरीर के अंगों का अनुपात इस प्रकार परिवर्तित होता है कि विविध तरीकों से इसे मापा जा सकता है, इसके साथ ही हमारी शब्दावली भी बढ़ती है। दूसरी और ''विकास'' एक व्यापक शब्द है जिसमें वृद्धि (ग्रोथ) शामिल हैं, परन्तु इसका अधिकांशतया प्रयोग संज्ञानात्मक योग्यता, प्रत्यक्षीकरण योग्यता, व्यक्तित्व और संवेगात्मक विकास और इसी प्रकार के क्रियात्मक और गुणात्मक परिवर्तनों के अर्थ में किया जाता है।

''परिपक्वता'' शब्द का प्रयोग हम बढ़ती उम्र के साथ सामने आने वाले प्राकृतिक परिवर्तनों के अर्थ में करते हैं, उदाहरणतया व्यक्ति के यौवनारम्भ की आयु पर पहुँचने वाले हार्मोन संबंधी परिवर्तन। इसका एक उदाहरण यह भी है कि जब कोई लड़की किशोरावस्था में पहुँचती है तो एस्ट्रोजन स्त्राव के प्रभाव से उसके स्तन विकसित होने लगते हैं। परिपक्तवा का अर्थ है वे परिवर्तन जो मूलतः जैविक प्रकृति के होते हैं और हमारे जेनेटिक प्रोग्राम के कारण अस्तित्व में आते हैं। हमारी जैविक रूपरेखा समय के साथ–साथ एक पूर्व–निर्धारित परिवर्तन–क्रम का अनुसरण करती है। इसका अवलोकन हम बचपन के दौरान दांतों के विकास में कर सकते हैं। आयु बढ़ने के साथ शरीर में हुये अनुपातिक परिवर्तनों में हम इस प्रकार की पूर्व निर्धारित सर्वव्यापी (यूनीवर्सल) प्रवृत्ति का उदाहरण देख सकते हें। मोटे तौर पर जन्म के समय सिर का आकार पूरे शरीर के आधे के बराबर होता है, परन्तु वयस्कता की आयु तक आते–आते यह अनुपात कम होता चला जाता है, तब इसका आकार सम्पूर्ण शरीर का एक चौथाई ही रह जाता है। इसलिए, हमारे शरीर में हुये परिपक्तवा संबंधी परिवर्तन, सीखने अथवा रोग होने या चोट लगने जैसे घटकों की अपेक्षा मूलतः उम्र बढ़ने की प्रक्रिया के कारण होते हैं।

उल्लेखनीय है कि व्यवहार में परिवर्तन सीखने (लर्निंग) के कारण भी घटित होते हैं। अपने परिवेश के साथ परस्पर अन्तःक्रिया के परिणामस्वरूप व्यक्ति सीखता है। परिपक्वता, कच्चा माल उपलब्ध करवाती है और सीखने की प्रक्रिया की संभावना के घटित होने के लिए एक भूमि तैयार करती है। जैसे पढ़ना सीखने का उदाहरण देखें तो हमें पता लगेगा कि इसके लिये बालक का जैविक रूप से पढ़ने के लिए तैयार होना अनिवार्य है। इससे पहले कि बालक पढ़ना सीख सके उसके आंखों का विकास इतना अवश्य हो कि वे समुचित रूप से केन्द्रित किये जाने के लिए सक्षम हों। अतः परिपक्वता और सीखने की प्रक्रिया, संयुक्त रूप से व्यक्ति के व्यवहार में परिवर्तन लाते हैं।

''क्रमिक विकास'' (इवोल्यूशन) वह शब्द है जिसके द्वारा हम किसी (जाति) में हुये विशिष्ट–परिवर्तनों की और संकेत करते हैं। क्रमिक विकास संबंधी परिवर्तन बहुत धीरे–धीरे होते हैं और एक पीढ़ी

से दूसरी पीढ़ी को हस्तांतरित किये जाते हैं ताकि उत्तरजीवन के लिए उस जाति के पास बेहतर साधन उपलब्ध रहें। वानरों के मानव बनने के विकास क्रम में लगभग 14 मिलियन वर्षों की अवधि लग गई। जाति के स्तर पर होने वाले परिवर्तनों को ('फाइलोजेनेटिक') जातिवृत्तिक और व्यक्ति के स्तर पर होने वाले परिवर्तनों को 'व्यक्तिवृत्तिक' (ऑनटूजेनेटिक) परिवर्तन कहते हैं। विकास–क्रम (इवोल्यूशन) शब्द का प्रयोग वृद्धिपरक परिवर्तनों के वर्णन के लिए भी किया जाता है, जो कि विकास की प्रक्रिया के दौरान होते हैं।

ग) विकास के अभिलक्षण

अब हम विकास के अभिलक्षणों की विशेषताओं को सारांश में प्रस्तुत कर सकते हैं ताकि हमें इन परिवर्तनों का अन्य प्रकार के परिवर्तनों से अन्तर स्पष्ट करने में सहायता मिल सके।

- विकास एक जीवन–पर्यन्त प्रक्रिया है, जो गर्भधारण से लेकर मृत्यु–पर्यन्त तक होती रहती है।
- विकासात्मक परिवर्तन प्रायः व्यवस्थापरक, प्रगत्यात्मक और नियमित होते हैं। सामान्य से विशिष्ट, और सरल से जटिल और एकीकृत से क्रियात्मक स्तरों की ओर अग्रसर होने के दौरान प्रायः यह एक पैटर्न का अनुसरण करते हैं।
- विकास बहु–आयामी होता, अर्थात् कुछ क्षेत्रों में यह बहुत तीव्र वृद्धि दर्शाता है, जबकि अन्य क्षेत्रों में इसमें कुछ कमियाँ देखने में आती हैं।
- विकासात्मक परिवर्तनों में प्रायः परिपक्वता में क्रियात्मकता के स्तर पर उच्च स्तरीय वृद्धि देखने में आती है, उदाहरणतया शब्दावली के आकार और जटिलता में वृद्धि। परन्तु इस प्रक्रिया में कोई कमी अथवा क्षति भी निहित हो सकती है, जैसे हड्डियों के घनत्व में कमी या वृद्धावस्था में स्मृति क्षीण होना।
- इसके अतिरिक्त वृद्धि और विकास, सदैव एक समान नहीं होता। विकास के पैटर्न में प्रायः सपाटता (प्लेटियस) भी देखने में आती है, जिसमें ऐसी अवधि का भी संकेत मिलता है जिसके दौरान कोई सुस्पष्ट सुधार देखने में नहीं आता।
- विकासात्मक परिवर्तन 'मात्रात्मक' हो सकते हैं, जैसे आयु बढ़ने के साथ कद बढ़ना, अथवा 'गुणात्मक', जैसे नैतिक मूल्यों का निर्माण।
- विकास की प्रक्रिया सतत के साथ साथ 'विछिन्न' अर्थात् दोनों प्रकार से हो सकती है। कुछ परिवर्तन तेजी से होते हैं और सुस्पष्ट रूप से दिखाई भी देते हैं जैसे पहला दाँत निकलना, जबकि कुछ परिवर्तनों को दिन प्रतिदिन की क्रियाओं में आसानी से देख पाना संभव नहीं होता क्योंकि वे अधिक प्रखर नहीं होते, जैसे व्याकरण को समझना।
- विकासात्मक परिवर्तन सापेक्षतया स्थिर होते हैं। मौसम, थकान अथवा अन्य आकस्मिक कारणों से होने वाले अस्थाई परिवर्तनों को विकास की श्रेणी में नहीं रख सकते।

- विकासात्मक परिवर्तन बहु–आयामी और परस्पर संबद्ध होते हैं। अनेक क्षेत्रों में यह परिवर्तन एक साथ एक ही समय पर हो सकते हैं, अथवा एक समय में एक भी हो सकता है। किशोरावस्था के दौरान शरीर के साथ–साथ संवेगात्मक, सामाजिक और संज्ञानात्मक क्रियात्मकता में भी तेजी से परिवर्तन दिखाई देते हैं।
- विकास बहुत ही लचीला होता है। इसका तात्पर्य है कि एक ही व्यक्ति अपनी पिछली विकास दर की तुलना में किसी विशिष्ट क्षेत्र में अपेक्षाकृत आकस्मिक रूप से अच्छा सुधार प्रदर्शित कर सकता है। एक अच्छा परिवेश शारीरिक शक्ति, अथवा स्मृति और बुद्धि के स्तर में अनापेक्षित सुधार ला सकता है।
- विकास प्रासंगिक हो सकता है। यह ऐतिहासिक, परिवेशीय और सामाजिक–सांस्कृतिक घटकों से प्रभावित हो सकता है। माता–पिता का देहांत, दुर्घटना, युद्ध, भूचाल और बच्चों के पालन–पोषण के रीति–रिवाज ऐसे घटकों के उदाहरण हैं जिनका विकास पर प्रभाव पड़ सकता है।
- विकासात्मक परिवर्तनों की दर अथवा गति में उल्लेखनीय 'व्यक्तिगत अन्तर' हो सकते हैं। यह अन्तर आनुवांशिक घटकों अथवा परिवेशीय प्रभावों के कारण हो सकते हैं। कुछ बच्चे अपनी आयु की तुलना में अत्यधिक पूर्व–चेतन हो सकते हैं, जबकि कुछ बच्चों में विकास की गति बहुत धीमी होती है। उदाहरणतया, यद्यपि एक औसत बच्चा 3 शब्दों के वाक्य 3 वर्ष की आयु में बोलना शुरू कर देता है, परन्तु कुछ ऐसे बच्चे भी हो सकते हैं जो 2 वर्ष के होने से बहुत पहले ही ऐसी योग्यता प्राप्त कर लेते हैं, जबकि कुछ ऐसे बच्चे भी हो सकते हें जो 4 वर्ष की आयु होने तक भी पूरा वाक्य बोलने में सक्षम नहीं हो पाते। इसके अतिरिक्त, कुछ बच्चे ऐसे भी हो सकते हैं जो अपनी आयु की उच्चतम सीमा से ऊपर जाकर भी बोलने में सक्षम होते हैं।

पाठगत प्रश्न 10.1

1. निम्नलिखित उक्तियों में से सत्य/असत्य विकल्प का चयन करें:–

   क) विकास मात्रात्मक और गुणात्मक दोनों प्रकार के परिवर्तनों की ओर संकेत करता है। सत्य/असत्य

   ख) विकास दर एक समान होती है। सत्य/असत्य

   ग) विकास के अध्ययन में वृद्धावस्था सम्मिलित नहीं है। सत्य/असत्य

   घ) एक ही व्यक्ति एक ही समय पर कुछ पक्षों में वृद्धि और कुछ में क्षति प्रदर्शित कर सकता है। सत्य/असत्य

   ङ) अच्छा परिवेश नाटकीय परिवर्तन उत्पन्न कर सकता है। सत्य/असत्य

2. निम्नलिखित प्रश्नों के संक्षिप्त उत्तर लिखें:

क) विकास की संकल्पना की व्याख्या करें।

ख) मानव विकास की किन्हीं 3 प्रमुख अवधारणाओं का उल्लेख करें।

9.2 विकास के प्रभाव–क्षेत्र

जैसा कि हमने पढ़ा है, विकास एक व्यापक शब्द है जिसमें अनेक क्षेत्रों में हुये परिवर्तन समाहित हैं। इन क्षेत्रों अथवा प्रभाव–क्षेत्रों के मुख्यतया तीन वर्ग हैं:

1. **दैहिक और गतिक (मोटर) विकास:** इसमें शारीरिक–आकार और इसका ढांचा, शरीर की विविध प्रणालियों की क्रियाविधि में हुए परिवर्तन और मस्तिष्क का विकास, एवं बोधात्मक और गतिक विकास के परिवर्तन आते हैं।

2. **संज्ञानात्मक विकास:** इसमें संज्ञानात्मक और बौद्धिक प्रक्रिया का विकास, जिसमें स्मृति, अवधान, बुद्धि, शैक्षणिक ज्ञान, समस्या का समाधान, कल्पना, सृजनात्मकता तथा भाषा का विकास प्रतिरूपित होते हैं।

3. **सामाजिक–संवेगात्मक विकास:** इसमें यह प्रतिरूपित होता है कि हम अन्य व्यक्तियों के साथ अपने संबंध कैसे विकसित करते हैं, और हमारे बड़े होने के साथ–साथ हमारे भीतर संवेग कैसे उत्पन्न और परिवर्तित होते हैं। इसमें संवेगात्मक संप्रेषण और आत्म–नियंत्रण, निजी एवं अन्य व्यक्तियों के बारे में समझ, अन्तरवैयक्तिक कौशल, व्यक्तित्व और मित्रता के संबंध बनना और नैतिक विवेक शक्ति सम्मिलित हैं।

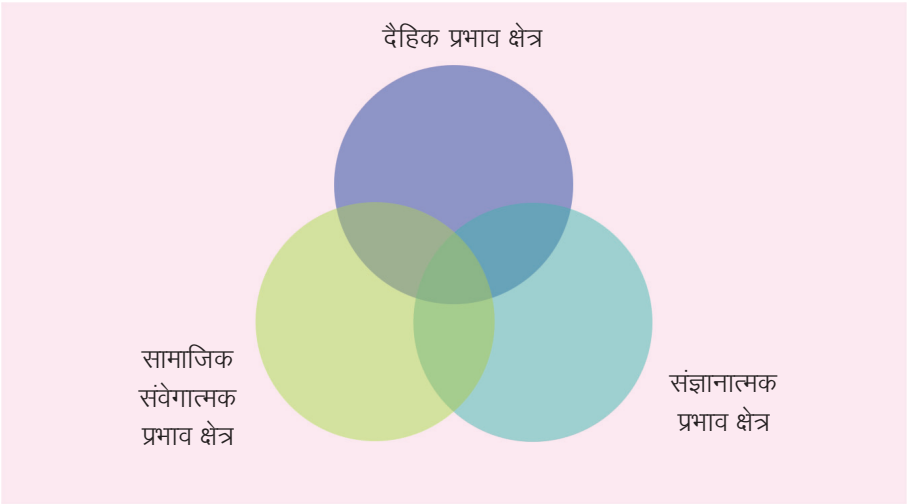

चित्र 9.1: विकास के प्रभाव क्षेत्रों का अंत: संबंध

ये प्रभावक्षेत्र अथवा क्षेत्र अन्तः संबद्ध होते हैं और रूपाकार में साकल्यवादी (होलिस्टिक) होते हैं ताकि व्यक्ति के विकास का पैटर्न अद्वितीय हो सके। प्रत्येक प्रभाव क्षेत्र, प्रभाव डालता है और इस पर अन्य प्रभाव क्षेत्रों का भी प्रभाव होता है। जैसे ही एक शिशु शारीरिक रूप से विकसित होता है तो अनेक गतिक कौशल (मोटर स्किल्स) अर्जित करता है। जैसे ही शिशु पकड़ने, कहीं पहुँचने, बैठने, रेंगने, खड़े होने और चलने के लिए सक्षम होता/होती है तो वह अपने परिवेश का भली प्रकार छानबीन करने के लिए सक्षम हो जाता है, जिसके परिणामस्वरूप आगे का संवेगात्मक विकास होता है। सोच और समझ में हुआ सुधार बेहतर सामाजिक संबंध बनाने में सहायता के साथ–साथ बेहतर संवेगात्मक अभिव्यक्ति में भी सहायता करता है। समेकित रूप से हम यह कह सकते हैं कि प्रत्येक प्रभावक्षेत्र बच्चे के संवर्धित अनुभव, सीखने में और सर्वांगीण विकास में सहायक होता है।

पाठगत प्रश्न 9.2

निम्नलिखित कथनों में रिक्त स्थान भरें:–

क) स्मृति और भाषा में सुधार ..... प्रभाव क्षेत्र में विकास का संकेत करता है।

ख) अन्तरवैयक्तिक संबंध ..... प्रभाव क्षेत्र में आते हैं।

ग) शरीर के आकार और ढांचे में परिवर्तन ..... प्रभाव क्षेत्र के विकास में आते हैं।

घ) विकास के ..... व्यापक प्रभाव क्षेत्रों को सुविधा के लिए वर्गीकृत किया जा सकता है।

9.3 विकास के चरण

यद्यपि विकास एक सतत प्रक्रिया है, तथापि कुछ सिद्धान्तवादियों का विश्वास है कि विकासात्मक कार्यों के प्रमुख स्थानांतरणों के स्थापन और निर्धारण के लिए विविध चरणों को पहचाना जा सकता है। इससे विकासात्मक परिवर्तनों के परिवीक्षण (मॉनिटरिंग) में सहायता मिलती है। यहाँ यह उल्लेखनीय है कि इसमें परस्पर कोई सुस्पष्ट विभाजक रेखा नहीं है। प्रत्येक चरण के कुछ विशिष्ट अभिलक्षण हैं और वे अगले चरण के लिए भूमि तैयार करते हैं। कुछ सिद्धान्तवादियों ने विकास के किन्हीं विशिष्ट क्षेत्रों में कुछ चरणों के सुझाव दिये हैं। उदाहरणतया पियाजे ने संज्ञानात्मक विकास के चरणों को पहचाना और फ्रायड ने मनोयौनिक (साइकोसैक्सुअल) विकास के चरणों को पहचाना। इन सिद्धान्तों की व्याख्या अन्य पाठों में की गई है।

क. विकासात्मक चरण: संपूर्ण जीवनकालिक परिप्रेक्ष्य

अधिकांश मनोवैज्ञानिकों ने विकास के निम्नलिखित चरणों को पहचाना है:

- **प्रसव–पूर्व अवधि (गर्भधारण से जन्म होने तक):** इस अवधि में एक–कोशीय जीव गर्भाशय के अन्दर मानव शिशु में परिवर्तित होता है।

- **शैशव और डगमगाते हुये चलना (जन्म से 2 वर्ष तक):** शरीर और मस्तिष्क में होने वाले तीव्र परिवर्तन, अनेक संवेदी (सेंन्जरी), गतिक (मोटर), सामाजिक और संज्ञानात्मक क्षमता के अस्तित्व में आने की प्रक्रिया में सहायता करते हैं।
- **प्रारंभिक बचपन (2–6 वर्ष):** गतिक (मोटर) कौशलों में सुधार आता है, भाषा विकसित होती है, समवयस्कों (पीयर्स) के साथ संबंध गहन होते हैं, और बच्चा खेल के माध्यम से सीखता है।
- **मध्य बचपन (6–11 वर्ष):** यह स्कूल में जाने के वर्ष हैं जब बच्चा शैक्षणिक कौशल अर्जित करता है, सोच की प्रक्रियाओं में सुधार आता है, मित्र बनते हैं और स्व–प्रत्यय (सैल्फ–कन्सेप्ट) की संरचना होती है।
- **किशोरावस्था (11–20 वर्ष):** इस अविध को यौवनारम्भ की अवधि माना जाता है और इसमें बड़ी तेजी से शारीरिक और हार्मोन संबंधी परिवर्तन होते हैं, सूक्ष्म सोच का अविर्भाव होना, यौन परिपक्वता, समवयस्कों के संग गहन संबंध बनाना, स्व की संवेदना और माता–पिता के नियंत्रण से स्वतंत्रता प्राप्त करने संबंधी संकेत मिलते हैं।
- **प्रारंभिक वयस्कता (20–40 वर्ष):** यह जीवन का वह चरण है जब युवक शिक्षा प्राप्त करने, या जीविका तलाश करने और विवाह के लिए अंतरंग संबंध बनाने और फिर बच्चे पैदा करने के लिए घर से बाहर निकलते हैं।
- **मध्य वयस्कता (40–60 वर्षः)** इस चरण में व्यक्ति अपनी जीविका (कैरियर) के चरम पर होता/होती है। यह समय बच्चों द्वारा स्वतंत्र जीवन शुरू करने में उनकी सहायता करने, और वृद्धावस्था की ओर बढ़ते अपने माता–पिता की देखभाल करने का होता है।
- **उत्तर वयस्कता (60 वर्ष से मृत्यु पर्यन्त):** इस अवधि को, कार्य से सेवानिवृत्त होने, ऊर्जस्विता (स्टैमिना) और शारीरिक स्वास्थ्य में क्षीणता, नाती–पोतों से गहरे लगाव, और आसन्न वृद्धावस्था और स्वयं की और जीवन साथी की मृत्यु को झेलने के रूप में चिन्हित किया गया है।

चित्र 9.2 मानव विकास के विविध चरण

यद्यपि विकास के चरणों को सार्वभौमिक रूप से स्वीकृत किया गया है परन्तु आयु का सही विस्तार (रेंज) यादृच्छिक (आर्बिटरी) है और सांस्कृतिक घटकों पर आधारित है। उदाहरणतया कुछ संस्कृतियों में किशोरावस्था और इससे जुड़े तनाव का कोई भिन्न सुस्पष्ट चरण नहीं है। व्यक्ति बचपन से सीधे वयस्क वय की ओर बढ़ जाता है। वृद्धावस्था की संकल्पना, संवर्धित चिकित्सीय, स्वास्थ्य और सौन्दर्य संबंधी सुविधाओं के साथ एक परिवर्तन के दौर से गुजर रही है। जीवन–काल की संभाव्यता में भी वृद्धि हुई है और अब भारत में यह 65 वर्ष की आयु तक पहुँच गया है।

ख. जीवन के चरण : स्वदेशी दृष्टिकोण

प्राचीन ग्रन्थों में भी मानव जीवन–काल को विविध चरणों में बाँटा गया है। जीवन को चार चरणों के विकास क्रम के रूप में स्वीकृत किया गया जिन्हें आश्रम कहा जाता है, जिसका शाब्दिक अर्थ है निवास स्थान।

निम्न चार आश्रम माने गये हैं:–

- **ब्रह्मचर्य:** इस अवधि में मुख्य कार्य हैं विद्यार्थी के रूप में किसी गुरु के मार्गदर्शन में रहकर शिक्षा ग्रहण करना, जिसमें अनुशासन और सरल जीवन पर बल दिया जाता है।
- **गृहस्थ:** जीवन के इस चरण में व्यक्ति को अपने सामाजिक संदर्भ में परिवार बनाने, उसकी देखभाल करने का दायित्व लेने के लिए कार्य करना होता है।
- **वानप्रस्थ:** इस अवधि को व्यक्ति द्वारा अपना परिवार बना लेने और उसके प्रति अपने कर्तव्यों को सफलतापूर्वक पूरा कर लेने के पश्चात्, एकांतवास में रहने के रूप में स्वीकार किया गया है। इसमें कठोर अनुशासन और आत्म–संयम और युवा लोगों के साथ अपने दायित्वों को बांटने की आवश्यकता होती है।
- **सन्यास:** यह जीवन का अंतिम चरण है, जब व्यक्ति को सांसारिक चीजों से सम्पूर्ण विराग प्राप्त करने, इच्छाओं से मुक्ति, और अंतिम आत्म–ज्ञान की ओर बढ़ने और संसार को त्यागने के लिए अग्रसर होना होता है।

यह सभी चरण अथवा आश्रम इसी सिद्धान्त पर आधारित हैं, कि एक मानव की वृद्धि होनी चाहिए, सांसारिक कर्तव्यों में भागीदारी करने और अपना कर्तव्य निष्पादन करना चाहिए और समाज की प्रगति और कल्याण के लिए योगदान करना चाहिये और मुक्ति एवं आध्यात्मिक ज्ञान–वृद्धि की ओर अग्रसर होना चाहिए। यह वाँछित है कि वृद्ध लोगों को युवा पीढ़ी के लिए मार्ग प्रश्स्त करना चाहिए। इस योजना में व्यक्ति अपने समाज और परिवेश के प्रति प्रतिबद्धता के साथ जीता है, जिसमें सम्पूर्ण जीवित प्राणी जगत जैसे पशु और वृक्ष सम्मिलित हैं। इसमें उपभोक्ता होने और निजी हितों के लिए परिवेश के शोषण के स्थान पर संपूर्ण जीव–जगत के साथ सह–अस्तित्व के साथ रहने पर बल दिया जाता है।

ग. विकासात्मक कार्य

प्रत्येक विकासात्मक चरण को एक प्रभावी लक्षण अथवा एक प्रमुख विशिष्टता से परिपूर्ण चरण के रूप में अभिलक्षित किया गया है जो उसका अद्वितीय होना निर्धारित करता है। उदाहरणतया

एक बच्चे से यह अपेक्षा की जाती है कि वह स्कूल जाये और पढ़ाई करे, जबकि एक वयस्क से यह अपेक्षा की जाती है कि वह काम करे और परिवार बनाये। कुछ अभिलक्षण अन्य की तुलना में अधिक प्रखरता से दिखाई देते हैं और प्रत्येक अवधि को एक चरण कहा जाता है। लोग, कुछ व्यवहारों के पैटर्नों और कौशलों को किन्हीं विशिष्ट चरणों पर अधिक आसानी से और सफलतापूर्वक सीख लेते हैं और यह एक सामाजिक प्रत्याशा बन जाती है। उदाहरणतया, अपनी वय के मध्य बचपन में उससे यह आशा की जाती है कि वह अकेला (स्वतंत्र रूप से) स्कूल जाए किसी विशिष्ट आयु में व्यक्ति से ऐसी सामाजिक अपेक्षायें सार्वजनिक होती हैं जिसमें ''विकासात्मक कार्य'' सन्निहित होते हैं। यदि कोई व्यक्ति किसी विशिष्ट आयु के विकासात्मक कार्यों को दक्षता से करने में सक्षम हो जाये तो यह माना जाता है कि वह विकास के अगले चरण में सफलतापूर्वक अग्रसर हो गया/गई है।

पाठगत प्रश्न 9.3

1. **प्रत्येक कथन में से सत्य या असत्य विकल्प का चयन करें:**

   क) विकासात्मक चरणों का एक निश्चित आयु विस्तार (रेंज) होता है।

   ख) प्रसव–पूर्व अवधि जन्म से गर्भ धारण तक जाती है।

   ग) किशोरावस्था को तीव्र, शारीरिक और मनोवैज्ञानिक परिवर्तनों की आयु के रूप में चिन्हित् किया जाता है।

   घ) हिन्दू विचारधारा में विकास के चार चरण होते हैं।

   ङ) विकास की हिन्दुओं की संकल्पना में परिवार से दूर रहने को प्रोत्साहित किया जाता है।

   च) विकासात्मक कार्य, किसी विशिष्ट आयु समूह की सामाजिक अपेक्षायें होती हैं।

2. **निम्नलिखित प्रश्नों के संक्षिप्त उत्तर लिखें:**

   क) प्राचीन हिन्दू ग्रन्थों में उल्लिखित किए अनुसार विकास के मुख्य चरणों का उल्लेख करें।

   ख) **''विकासात्मक कार्य''** पद का क्या तात्पर्य है?

9.4 विकास पर प्रभाव

जिन घटकों द्वारा विकास का क्रम निर्धारित होता है उन्हें समझना बहुत महत्वपूर्ण है। हम में से प्रत्येक व्यक्ति जेनेटिक घटकों और परिवेशीय प्रभावों की उत्पत्ति है। परिपक्वता और सीखने

की भूमिका पहले ही इससे पूर्व अनुभाग (खंड) में संक्षिप्त रूप से उल्लिखित की गई है। आइये अब हम आनुवंशिकता और परिवेश के योगदान को कुछ विस्तार से पढ़ें।

क. आनुवांशिकी (जेनेटिक्स्) प्रभाव

गर्भधारण के समय मां के अण्डाणु और पिता के शुक्राणु कोशों में मिलन होता है ताकि एक नए कोश की रचना हो सके। कोश के केन्द्रक (न्यूक्लियस) के कणों को गुणसूत्र (क्रोमासोम्स) कहते हैं। गुणसूत्रों का अस्तित्व युग्मों में होता है। मानव कोश में 46 गुणसूत्र होते हैं जो 23 युग्मों में व्यवस्थित होते हैं। प्रत्येक युग्म में से एक मां से आता है और दूसरा पिता से और यह गुणसूत्र आनुवांशिकी सूचना को संचारित करते हैं। प्रत्येक गुणसूत्र (क्रोमासोम) में बहुत बड़ी संख्या में जीन्स होते हैं, जोकि लक्षणों के वास्तविक वाहक हैं।

निषेचित युग्मज (जाइगौट) मिलकर क्रोमोसोम्स के विविध संयोजन (कम्बिनेशनस) बनाते हैं। इस प्रकार एक ही माता–पिता के प्रत्येक बच्चे से विभिन्न जीन्स बच्चे में अपने अथवा रक्त संबधियों के साथ अन्यों से अधिक समानतायें होती हैं।

ख. समजातीय (जीनोटाइप) और समलक्षणीय (फ़ीनोटाइप)

आनुवंशिक संचारण (ट्रॉंस्मिशन) एक अत्यन्त जटिल प्रक्रिया है। मनुष्यों में हमें दृष्टिगोचर होने वाले अधिकांश अभिलक्षण, असंख्य जीन्स का संयोजन होता है। जीन्स के असंख्य प्रतिवर्तन (परम्युटेशन्स) और संयोजन (कम्बीनेशन्स) शारीरिक और मनोवैज्ञानिक अभिलक्षणों में अत्यधिक विभेदों के लिए जिम्मेदार होते हैं।

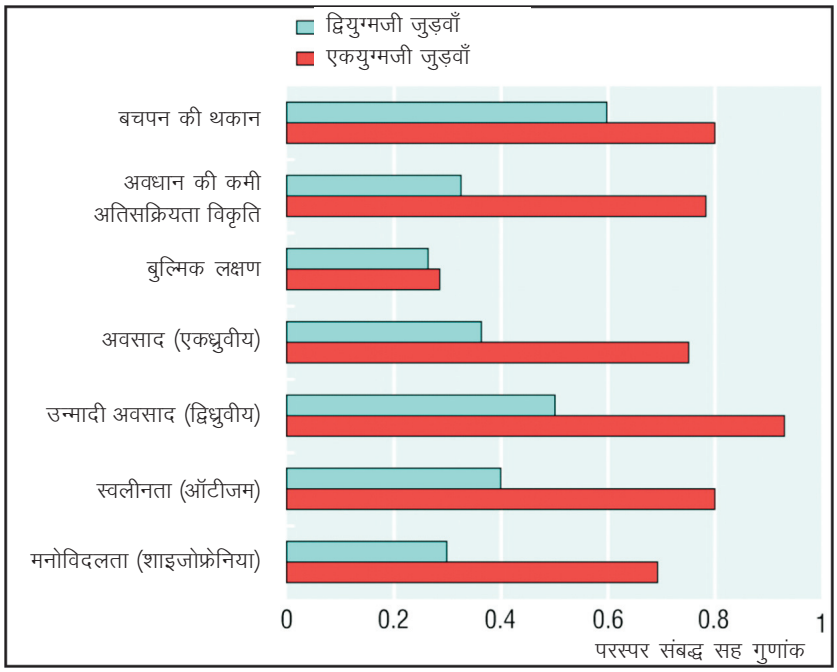

चित्र 3: एकयुग्मजी और द्वियुग्मजी जुड़वाँ में अन्तर

केवल समान अथवा मोनोज़ाइगौटिक ट्विन्स में एक समान सैट के गुणसूत्र (क्रोमासोम्स) और जीन्स होते हैं क्योंकि वे एक ही युग्मज (सिंगल ज़ाइगौट) के द्विगुणन (डुप्लिकेशन) से बनते हैं। अधिकांश जुड़वा भ्रातृवत्त अथवा द्वि–युग्मक होते हैं जो दो पृथक युग्मजों से विकसित होते हैं। यह भाईयों जैसे जुड़वा भाई और बहनों की तरह मिलते–जुलते होते हैं, परन्तु वे अनेक प्रकार से परस्पर एक–दूसरे से भिन्न भी होते हैं।

जीन प्रखर अथवा प्रतिगामी दोनों प्रकार के हो सकते हैं। यह एक ज्ञात सत्य है कि किन्हीं विशेष रंगों के लिए पुरुष और महिला में रंगों को पहचानने की अन्धता (कलर ब्लाइंडनैस) अथवा किन्हीं विशिष्ट रंगों की संवेदना नारी में, नर से अधिक हो सकती है। एक दादी और माँ, स्वयं रंग–अंधता से ग्रस्त हुये बिना किसी नर शिशु को यह स्थिति हस्तांतरित कर सकती है ऐसी स्थिति इसलिए है क्योंकि यह विकृति प्रखर होती है, परन्तु महिलाओं में यह प्रतिगामी (रिसेसिव) होती है। जीन्स जोड़ों में होते हैं। यदि किसी जोड़े में दोनों जीन प्रखर होंगे तो उस व्यक्ति में वह विशिष्ट लक्षण दिखाई देगा (जैसे रंगों को पहचानने की अन्धता), यदि एक जीन प्रखर हो और दूसरा प्रतिगामी, तो जो प्रखर होगा वही अस्तित्व में रहेगा। प्रतिगामी जीन आगे संप्रेषित हो जायेगा और यह अगली किसी पीढ़ी में अपने लक्षण प्रदर्शित कर सकता है।

अतः, किसी व्यक्ति में किसी विशिष्ट लक्षण के दिखाई देने के लिए प्रखर जीन की जिम्मेदार होता है। जो अभिलक्षण दिखाई देते हैं और प्रदर्शित होते हैं, जैसे आँखों का रंग, उन्हें समलक्षणी (फिनोटाइप्स) कहते हैं। प्रतिगामी जीन अपने लक्षण प्रदर्शित नहीं करते, जब तक कि वे अपने समान अन्य जीन के साथ जोड़ नही बना लेते। जो अभिलक्षण आनुवंशिक रूप से प्रतिगामी जीनों के रूप में आगे संचारित हो जाते हैं परन्तु वे प्रदर्शित नहीं होते उन्हें समजीनोटाइप (जीनोटाइप) कहते हैं।

ग. परिवेशीय प्रभाव

कोई बच्चा अपने माता–पिता की आनुवंशिकी से जो भी वंशानुक्रम में ग्रहण करता है उसे हम प्रकृति समझते हैं जबकि बच्चे के विकास में उसके परिवेश का जो प्रभाव उस पर पड़ता है उसे हम पालन–पोषण कहते हैं। किसी व्यक्ति के विकास को समझने के लिए हमें प्रकृति और पालन–पोषण अथवा वंशानुक्रम और परिवेश की परस्पर जटिल अन्तःक्रिया का अध्ययन करना होगा।

परिवेश के प्रभाव, मानव के प्रसव–पूर्व और प्रसव के उपरान्त, दोनों चरणों में बहुत ही महत्वपूर्ण हैं। प्रसव–पूर्व स्तर पर, जब भ्रूण माता के गर्भाशय में होता है, तो आंतरिक अथवा बाह्य कारक, जैसे कुछ वैध अथवा अवैध नशीले पदार्थ (ड्रग्स्), अल्कोहल, सीसा और प्रदूषक, अजन्मे शिशु के लिए हानिकर हो सकते हैं। मां की पौष्टिकता, रोग और संवेगात्मक तनाव भी भ्रूण के विकास को प्रभावित कर सकते हैं।

जन्म के पश्चात, अनेक प्रकार के परिवेशीय कारक एक बच्चे के विकास को प्रभावित करने के लिए क्रियाशील होते हैं। विकास का पारिस्थितिकी प्रणाली सिद्धान्त (इकॉलौजिकल सिस्टम्स्

थ्यूरी), परिवेशीय कारकों को व्यवस्थित संकेन्द्रीकृत वृत्त प्रणाली के रूप में निरूपित करता है।

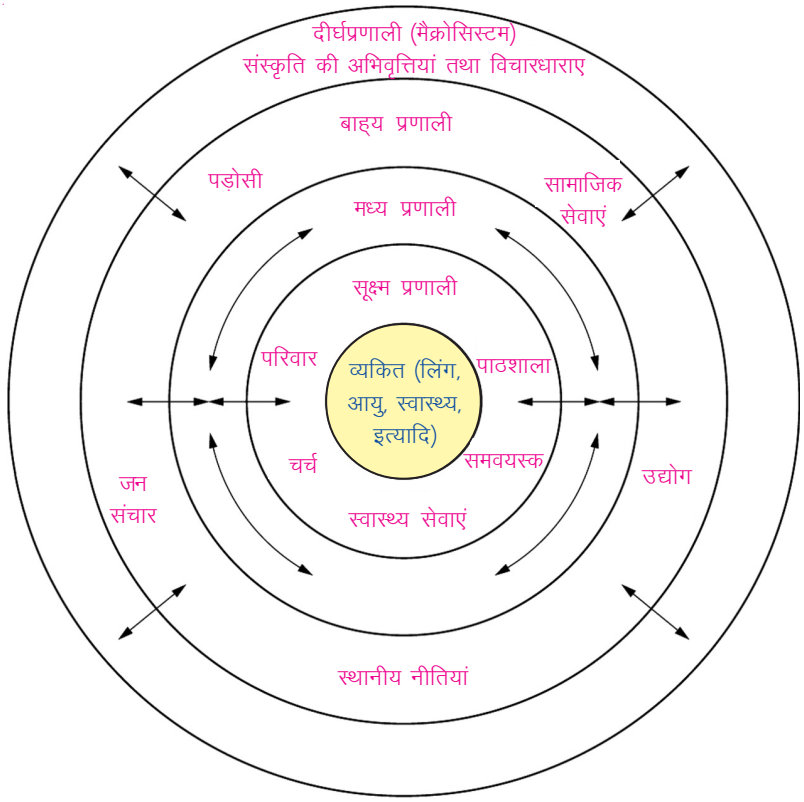

चित्र 4: मानव विकास को प्रभावित करने वाली पारिस्थितिक प्रणालियाँ

सूक्ष्म प्रणाली (माइक्रो सिस्टम) बच्चे के घर का परिवेश और उनके मध्य तथा बच्चों के निजी अभिलक्षणों में परस्पर अन्तःक्रिया है। मध्य–प्रणाली (मैसो–सिस्टम) में पारिवारिक सदस्यों और स्कूल एवं आस–पड़ोस के संबंध सम्मिलित हैं। बाह्य प्रणाली (एक्सो–सिस्टम) अप्रत्यक्ष कारकों के प्रभावों को इंगित करती है जैसे माता–पिता का कार्य–स्थल या सामुदायिक सेवाएँ। दीर्घ–प्रणाली (मैक्रो सिस्टम) सबसे बाहरी आवरण है जिसमें सांस्कृतिक मूल्य, कानून और रीति–रिवाज सम्मिलित हैं। यह प्रणालियाँ सदैव–परिवर्तनशील और गतिशील होती हैं। एक कालक्रम–प्रणाली (क्रोनोसिस्टम) भी है जिसमें समय का आयाम रूपायित है। जैसे–जैसे बच्चा बढ़ता है, प्रत्येक प्रणाली में परिवर्तन होते रहते हैं, और अपने परिवेश के साथ अंतःक्रिया के कारण भी उसमें परिवर्तन होते हैं। कुल मिलाकर देखें तो, पारिस्थितिकी प्रणाली सिद्धान्त में बच्चे, परस्परावलम्बी प्रभावों के तंत्र–जाल (नेट वर्क) में अपने परिवेश के उत्पाद और उत्पादक दोनों ही होते हैं।

विकास की वर्तमान विचारधारा में प्रकृति और पालन–पोषण दोनों को महत्व दिया गया है। आनुवांशिकता और परिवेश परस्पर इस प्रकार गुंथे हुये हैं कि इन्हें पृथक करना असंभव है, और बच्चे पर प्रत्येक परस्पर अपना प्रभाव डालता है। इसलिए व्यक्ति के विकास की कुछ सार्वभौमिक विशेषताएँ होती हैं और कुछ निजी विशेषताएँ होती हैं। आनुवांशिकता की भूमिका को समझना

बहुत महत्वपूर्ण है और इससे भी अधिक लाभकारी है कि हम यह समझें कि परिवेश में कैसे सुधार किया जा सकता है, ताकि बच्चे की आनुवांशिकता द्वारा निर्धारित सीमाओं के भीतर सर्वोत्त्म संभावित विकास के लिए सहायता की जा सके।

विकास के सिद्धान्तों और निर्धारकों की समझ अनेक प्रकार से सहायता करती है।

1. इससे हमें यह जानने में सहायता मिलती है कि किसी विशिष्ट आयु पर पहुँचकर व्यक्ति से क्या अपेक्षा की जानी चाहिए।
2. इससे यह सूचना मिलती है कि सर्वाधिक विकास के लिए कब अवसर उपलब्ध कराये जायें और उसे कब प्रेरित किया जाये।
3. बच्चों के साथ कार्यरत माता–पिता, शिक्षकों एवं अन्य सभी को यह सहायता मिलती है कि बच्चों को उनमें होने वाले शारीरिक और मनोवैज्ञानिक परिवर्तनों के लिए तैयार रहने के लिए समझाएँ।
4. इससे हमें सहयता मिलती है कि बड़े होने के साथ–साथ हमारे शरीरों और व्यक्तित्वों में जो परिवर्तन आते हैं उनके लिए हम तैयार रहें।
5. इससे हमें यह समझने में सहायता मिलती है कि परिवेश में सुधार करके विकास की प्रक्रिया को संवर्धित किया जाना संभव है।

पाठगत प्रश्न 9.4

1. निम्नलिखित उक्तियों में रिक्त स्थान भरिए:

   क) आनुवंशिकता .... के समय पर निर्धारित होती है।

   ख) मानव कोश में .... जोड़े गुणसूत्र के (क्रोमोसोम्स) होते हैं।

   ग) जीन .... अथवा .... हो सकते हैं।

   घ) पारिस्थितिकी पद्धति सिद्धान्त में जिस आवरण में सांस्कृतिक मूल्य, कानून और प्रथाएँ सम्मिलित हैं उसे .... कहते हैं

   ङ) गर्भाशय में अजन्मे शिशु को जो बाह्य कारण हानि पहुँचा सकते हैं, उन्हें .... कहते हैं।

2. निम्नलिखित प्रश्नों के संक्षिप्त उत्तर लिखें।

   क) ''जीनोटाइप'' और ''फ़ीनोटाइप'' पदों से आप क्या समझते हैं?

   ख) विकास के पारिस्थितिकी प्रणाली सिद्धान्त की संक्षिप्त व्याख्या कीजिए।

आपने क्या सीखा

- विकास में उस प्रक्रिया का निरूपण किया जाता है जिसके द्वारा कोई व्यक्ति बढ़ता है और गर्भधारण से मृत्यु पर्यन्त के जीवन काल में उसमें परिवर्तन होते हैं।
- विकास, व्यवस्थित, नियमित, प्रगत्यात्मक, बहु–आयामी, बहु–दिशात्मक, प्लास्टिक (लचीला) और प्रासंगिक होता है।
- विकास के प्रमुख प्रभाव क्षेत्र शारीरिक, संज्ञानात्मक और सामाजिक–संवेगात्मक होते हैं।
- सुविधा के लिए प्रसव पूर्व चरण से लेकर उत्तर वयस्कावस्था अथवा वृद्धावस्था तक फैली कालावधि को विभिन्न वर्गों में बाँटा जा सकता है।
- प्रत्येक चरण को किन्हीं विशिष्ट विकासात्मक कार्यों को करने के लिए अपेक्षित चरण के रूप में वर्गीकृत किया गया है, जो कि किसी प्रदत्त आयु समूह के दौरान सामाजिक रूप से किए जाने वाले कार्यों के रूप में अपेक्षित होते हैं।
- आनुवांशिक घटकों का निर्धारण गर्भ–धारण के समय होता है और जेनेटिक सूचनाओं का संवहन जीन्स और गुणसूत्रों (क्रोमोसोम्स्) द्वारा होता है।
- जेनोटाइप्स से तात्पर्य है वे अभिलक्षण जिनका वहन जेनेटिक्स के माध्यम से होता है परन्तु वे प्रदर्शित नहीं होते।
- फिनोटाईप्स् में वे अभिलक्षण निरूपित किए जाते हैं जिन्हें देखा जा सकता है।
- परिवेशीय घटकों का प्रसव–पूर्व एवं प्रसवोपरान्त, दोनों स्थितियों में विकास पर प्रभाव पड़ता है।
- बाह्य हानिकारक कारक, मां के गर्भ में स्थित भ्रूण को क्षति पहुंचा सकते हैं।
- मां का रोग, पोषण और तनाव, भ्रूण के विकास पर प्रभाव डाल सकता है।
- पारिस्थितिकी प्रणाली सिद्धान्त बढ़ते हुये बच्चे के परिवेश में अनेक उप–प्रणालियों के संबंध में सुझाता है, जोकि विकास को प्रभावित कर सकते हैं।
- प्रकृति और पालन–पोषण, संयुक्त रूप से विकास को प्रभावित करते हैं।

पाठांत प्रश्न

1. ''विकास'', ''वृद्धि'', 'परिपक्वता'' और ''विकास–क्रम'' पदों में अन्तर स्पष्ट करें।
2. विकास के प्रमुख प्रभाव क्षेत्रों का उल्लेख करें।
3. मानव विकास के प्रमुख चरणों की पहचान करें।

4. विकास में प्रकृति और पालन–पोषण के परस्पर महत्त्व के संबंध में चर्चा करें।

पाठगत प्रश्नों के उत्तर

9.1

1. क) सत्य
   ख) असत्य
   ग) असत्य
   घ) सत्य
   ङ) सत्य
2. क) भाग 9.1.1 देखें।
   ख) भाग 9.1.3 देखें।

9.2

क) संज्ञानात्मक

ख) सामाजिक–संवेगात्मक

ग) शारीरिक

घ) तीन

9.3

1. क) असत्य
   ख) असत्य
   ग) सत्य
   घ) सत्य
   ङ) असत्य
   च) सत्य
2. क) भाग 9.3.2 देखें।
   ख) भाग 9.3.3 देखें।

9.4

1. क) गर्भ धारण

   ख) 23

   ग) प्रखर, प्रतिगामी

   घ) जेनोटाईप

   ङ) मैक्रोसिस्टम

   च) टेराटोजेन्स (जन्म से विकृतांग)

2. क) भाग 9.4.2 देखें।

   ख) भाग 9.4.3 देखें।

पाठांत प्रश्नों के लिए संकेत

1. भाग 9.1.2 देखें।
2. भाग 9.2 देखें।
3. भाग 9.3.1 देखें।
4. भाग 9.4 देखें।